एक अच्छा
ख़िदमतगार
(हज़रत क़म्बर की कहानी)

786

आओ चलें फ़ुरात की तरफ़ और उसी नहर के किनारे बैठ कर अपने बचपन के क़िस्से याद करें। आज मुझे अपने दादा की बहुत याद आ रही है, कितनी मुहब्बत करते थे वो मुझसे! वो मेरे साथ खेलते थे, अच्छी–अच्छी कहानियाँ सुनाते थे। इसलिये उनके साथ बहुत मज़ा आता था। लेकिन अब मैं उन्हें नहीं देख सकता। क्योंकि अब वो इस दुनिया में नहीं रहे। कुछ साल पहले हज्जाज बिन यूसुफ़ ने उन्हें क़त्ल करवा दिया। वो एक ज़ालिम और बेरहम इन्सान था। हज्जाज बिन यूसुफ उस वक़्त कूफ़े का हाकिम (गवर्नर) था। मालूम है उसने मेरे दादा को क्यों शहीद करवा दिया ? सिर्फ़ इसलिए कि वो हज़रत अली अलैहिस्सलाम से बहुत मुहब्बत करते थे। दरअस्ल, मेरे दादा हज़रत अली (अ) के ख़िदमतगार यानी उनके नौकर थे।

अपने दादा के साथ गुज़ारा हर पल मैं कभी नहीं भूल सकता। मैं अब भी सोचता हूँ कि मेरे दादा कितने अच्छे इन्सान थे। वो कितने नेक, सच्चे और ज़िन्दा–दिल आदमी थे। वो बूढ़े हो चुके थे मगर बच्चों के साथ खेलते थे और उनसे प्यार करते थे। हम उन्हें दादा जी कहते थे। वैसे उनका नाम क़म्बर था। तब हमारा बचपना था, हम नहीं जानते थे कि हज़रत अली (अ) कौन हैं और कितने अज़ीम इन्सान हैं। हमें तो बस इतना मालूम था कि दादा जी उनकी ख़िदमत करते हैं। हमें यह भी नहीं पता था कि दादा जी उनकी ख़िदमत करके कितना बड़ा काम कर रहे हैं। हम तो सिर्फ़ यह चाहते थे कि दादा जी हमारे साथ खेलें और हमें कहानियाँ सुनायें।

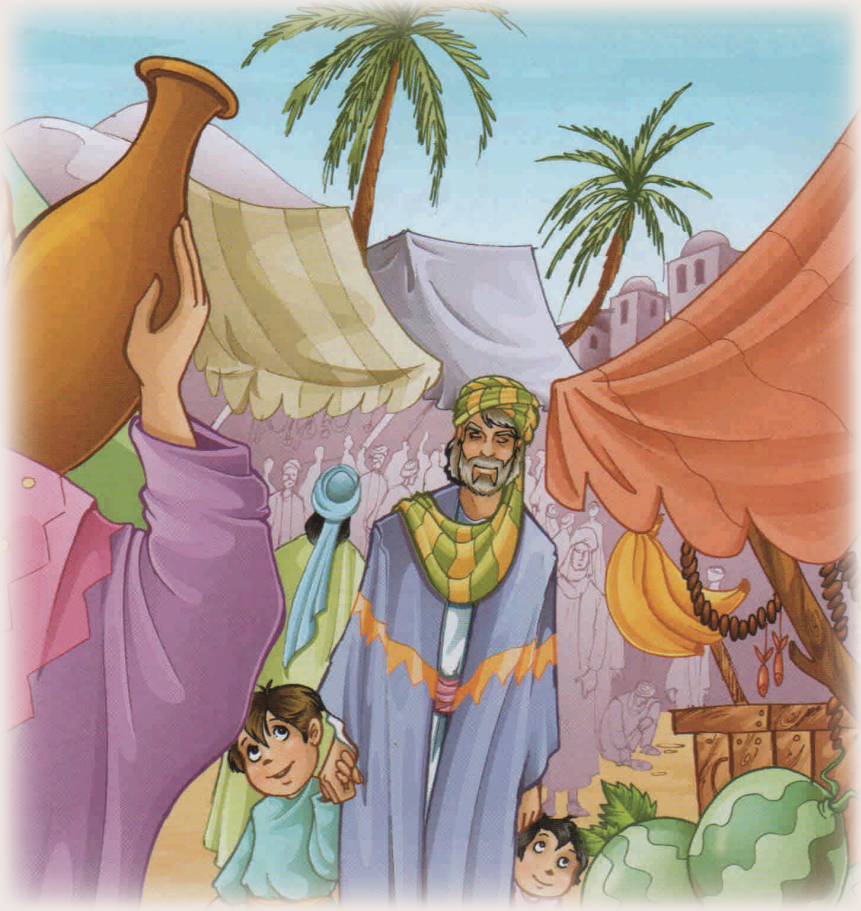

लेकिन अब हमारी समझ में आया कि उस वक़्त जो कहानियाँ दादा जी हमें सुनाया करते थे और जो अच्छी–अच्छी बातें हमें बताया करते थे, वो सब मौला अली (अ) की बताई हुई होती थीं। मुझे याद है कि दादा जी हमारे छोटे–छोटे हाथ पकड़ कर अपने साथ कूफ़े के बाज़ार में ले जाया करते थे। बाज़ार में तरह–तरह की ख़ुश्बुओं से मेरे मुँह में पानी आने लगता था। किसी दुकान से ताज़े हलवे की ख़ुश्बू आती थी तो कहीं से घरेलू कुलचे की। कभी मसालों की ख़ुश्बू आती थी तो कभी मिठाइयों की। बाज़ार का शोर भी हमें बचपन में बहुत अच्छा लगता था।

एक दिन दादा जी मुझे और मेरे छोटे भाई को लेकर कपड़ों की दुकान पर गये। वो हमारे लिये कुर्ते ख़रीदना चाहते थे। दादा जी हमसे बातें करते हुए चल रहे थे। हम दोनों भाई बाज़ार में आते–जाते लोगों को और दुकानों में सजी तरह–तरह की चीज़ों को ग़ौर से देख रहे थे। हम बाज़ार घूमने का मज़ा भी ले रहे थे और दादा जी की अच्छी–अच्छी बातें भी सुन रहे थे। रास्ते में उन्होंने कहा : जिस तरह एक घर में बच्चों की देख–भाल के लिये अल्लाह ने माँ–बाप को बनाया उसी तरह अल्लाह ने दुनिया के तमाम इन्सानों की देख–भाल के लिये एक इन्सान को बनाया है। क्या तुम बता सकते हो कि वो इन्सान कौन है ? और किस तरह दुनिया वालों की सरपरस्ती करता है ?

दादा जी के सवाल का जवाब देते हुए मैंने कहा : दादा जी हमें नहीं मालूम, आप ही बता दीजिए। दादा जी ने कहा : इन्सानों को अच्छी बातें बताने और उन्हें सीधा रास्ता दिखाने के लिये अल्लाह ने जिन लोगों का इन्तेज़ाम किया है उन्हें पैग़म्बर और इमाम कहते हैं। पैग़म्बरों के सिलसिले की आख़िरी कड़ी, हज़रत मुहम्मद (स0) थे। जब वो इस दुनिया से जाने लगे तो उन्होंने उन तमाम मुसलमानों को जमा किया जो हज करने आये थे। फिर अल्लाह के हुक्म से उन्होंने लोगों के बीच एलान किया कि जिस–जिस का मैं मौला (सरपरस्त) हूँ अली (अ0) उसके मौला होंगे। यानी हज़रत मुहम्मद (स0) मुसलमानों को बताना चाह रहे थे कि उनके बाद हज़रत अली (अ0) लोगों के लीडर और इमाम होंगे। इतना कहने के बाद दादा जी ने हमसे फिर पूछा कि अब बताओ हज़रत मुहम्मद (स0) के बाद लोगों का सरपरस्त कौन था? हम दोनो भाई एक साथ चिल्ला उठे : हज़रत अली (अ0)।

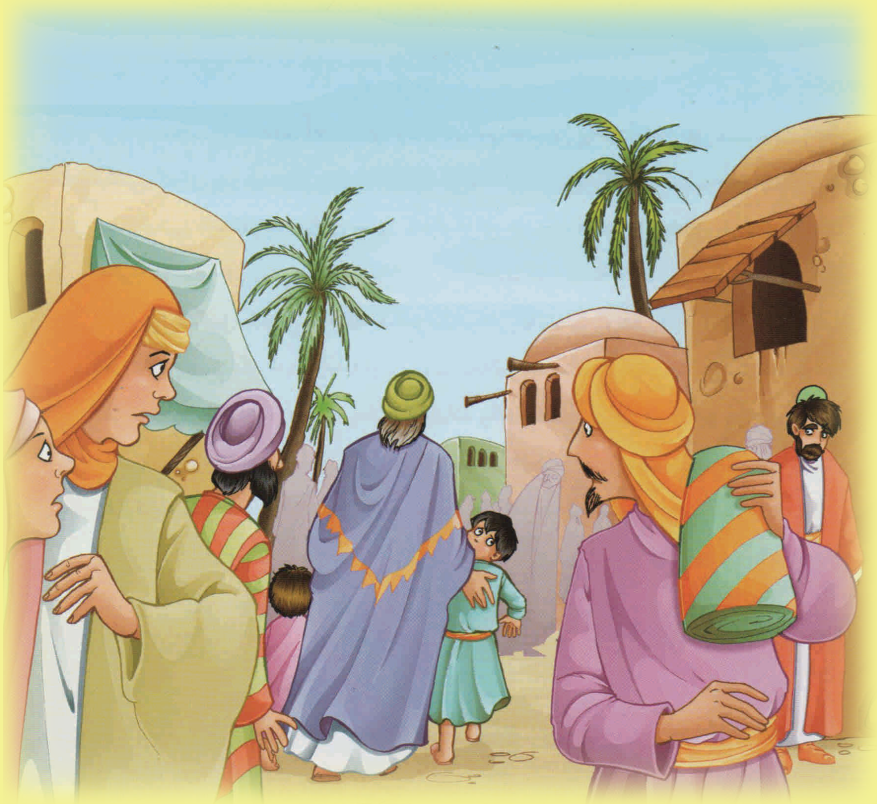

जब हम लोग यह बातें कर रहे थे तो आस–पास के लोग हमारी बातें सुन कर हमें घूर–घूर कर देखने लगे। तभी दादा जी ने हमारा हाथ ज़ोर से पकड़ा और तेज़ी से आगे बढ़ने लगे। कुछ दूर जाकर दादा जी ने हमसे कहा : बच्चों! मेरा जवाब आहिस्ता आवाज़ में दो क्योंकि इस तरह की बातें बहुत ख़तरनाक हो सकती हैं। हम लोगों ने बहुत ताज्जुब से पूछा : आख़िर क्यों ? मौला अली (अ0) का नाम लेना ख़तरनाक क्यों हो सकता है ? अभी आप ही ने तो कहा था कि वो हम मुसलमानों के बाप हैं। तो क्या बाप का नाम लेना ख़तरनाक होता है ? दादा जी ने उस वक़्त हमारा कोई जवाब नहीं दिया।

वो ख़ामोशी से आगे बढ़ गये और हमें एक कुलचे वाले की दुकान पर ले गये। फिर उन्होंने हमारे लिये कुलचे ख़रीदे। उसके बाद दादा जी ने हमारे कान में धीरे से कहा, " ख़तरनाक होने की वजह यह है कि हमारे आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (स0) के दुनिया से जाने के बाद बहुत से लोगों ने उनकी बात नहीं मानी और मौला अली (अ0) को अपना सरपरस्त व लीडर नहीं बनाया। यहाँ तक कि कुछ लोगों ने मौला अली (अ0) को सलाम करना भी छोड़ दिया। कुछ तो उनके जानी दुश्मन हो गए और उनसे जंग करने के लिये तैयार हो गये।

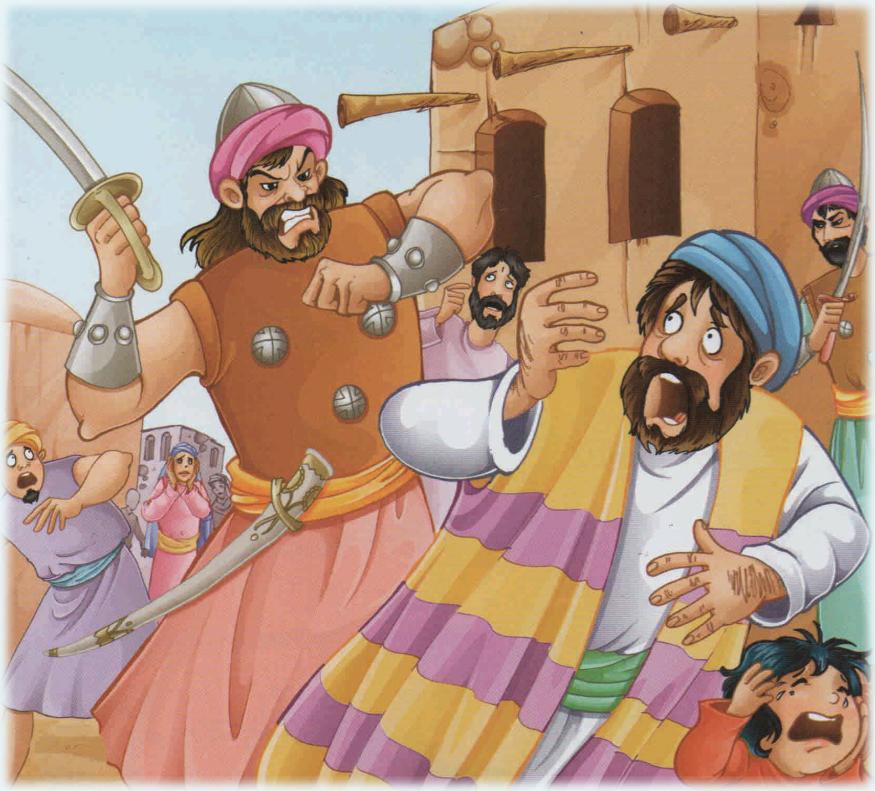

फिर दादा जी ने एक लम्बी साँस खींची और उदास होकर कहा, " और अब ख़ुदा व रसूल के वही दुश्मन हुकूमत कर रहे हैं। वो लोग रसूले ख़ुदा (स0) के घर वालों (अहलेबैत) और उनके मानने वालों को तरह–तरह से तकलीफ़ें देते रहते हैं यहाँ तक कि क़त्ल भी कर देते हैं।" जब दादा जी ने यह बातें बताईं तब हमारी समझ में आया कि उस वक़्त बाज़ार में हज़रत अली (अ0) का नाम ज़ोर से लेना कितना ख़तरनाक हो सकता था। और क्यों उस वक़्त दादा जी हमारा हाथ पकड़ कर वहाँ से आगे बढ़ गए थे। फिर दादा जी ने हमारी तरफ़ एक निगाह की और हमें थोड़ा डरा व घबराया देख कर कहाः बच्चों! डरो नहीं। आओ चलो तुम लोगों के लिये कपड़े ख़रीदें और घर चलें। फिर हम लोग कपड़ों की दुकान की तरफ़ चल पड़े।

कपड़े की एक दुकान से दादा जी ने हम दोनों के लिये कुर्ते ख़रीदे। हम नये कुर्ते ख़रीद कर बहुत खुश थे। जब दादा जी ने हमें बहुत खुश देखा तो कहा : कई साल पहले जब मैं जवान था तो इसी कूफ़ा शहर में हज़रत अली (अ0) के साथ रहा करता था। यह वही ज़माना था जब मुसलमानों ने थक हार कर हज़रत अली (अ0) को अपना हाकिम मान लिया था। वो तक़रीबन 5 साल (35 से 40 हिजरी) तक हाकिम रहे। उनकी हुकूमत के दौर में न कोई भूखा सोता था और न कोई बेघर था, न कोई चोरी करता था न कोई जुल्म। फिर दादा जी ने अपनी बात आगे बढ़ाते हुये कहा, "उन दिनों मैं हज़रत अली (अ0) का ख़िदमतगार (नौकर) था .....

तुम नहीं जानते कि मौला की ख़िदमत कर के मैं अपने आप को कितना ख़ुश क़िस्मत समझता था। रोज़ाना अपने इमाम की ज़ियारत करके मुझे जितनी ख़ुशी मिलती थी, मैं बता नहीं सकता। मेरे मौला ऐसे थे कि अल्लाह के क़रीबी फ़रिश्ते भी उनकी ख़िदमत करते थे। रोज़ाना नमाज़ के वक़्त मैं पानी का बर्तन उनके सामने पेश करता था ताकि वो वुज़ू कर लें। मौला इतनी अच्छी आवाज़ में कुरआन की तिलावत करते थे कि दिल चाहता था कि सुनते ही रहें। ख़ुदा की क़सम! अपने मौला की ख़िदमत करके मैं इतनी इज़्ज़त महसूस करता था कि अगर उसके बदले मुझे पूरी दुनिया की बादशाहत भी दे दी जाती तो मैं क़ुबूल न करता।" इतना कह कर दादा जी ख़ामोश हो गये, जैसे कि वो ख़यालों में खो गये हों। फिर दादा जी की आँखें आँसुओं से छलकने लगीं।

थोड़ा रुक कर वो बोले, "एक दिन मैं हज़रत अली (अ) के साथ कुर्ता ख़रीदने इसी बाज़ार में आया था। इमाम मुझे लेकर ऐसी दुकान पर गये जहाँ का दुकानदार उन्हें नहीं पहचानता था। इमाम ने दुकानदार से पूछा, क्या तुम्हारे पास ऐसे दो कुर्ते हैं जिनकी क़ीमत पाँच दिरहम से ज़्यादा न हो ? दुकानदार एक नौजवान था। वो दो ऐसे कुर्ते लाया जिनमें से एक की क़ीमत तीन दिरहम और दूसरे की क़ीमत दो दिरहम थी। इमाम ने मुझसे कहा, "क़म्बर! तीन दिरहम वाला कुर्ता तुम ले लो और दो दिरहम वाला कुर्ता मैं ले लेता हूँ।" मुझे ये बात अच्छी नहीं लगी कि मैं नौकर होकर महंगा कपड़ा पहनूँ और मेरे आक़ा मालिक होकर सस्ता कपड़ा पहनें। यह सोच कर मैंने उनसे कहा, "मेरे आक़ा! आप मुसलमानों के हाकिम और अमीरूल मोमनीन हैं, आप मिम्बर पर बैठते हैं, इसलिये आपको तीन दिरहम वाला कुर्ता पहनना चाहिये।

मौला ने कहा, "नहीं क़म्बर! तुम अभी जवान हो, तुम्हारे दिल में उमंगें हैं इसलिये तुम्हें महंगा और अच्छा कुर्ता पहनना चाहिये।" यह क़िस्सा सुनाने के बाद दादा जी ने दुकानदार को कुर्तों की क़ीमत अदा की और घर की तरफ़ चल पड़े। मुझे याद है कि दादा जी को नमाज़ व तस्बीह पढ़ना और अल्लाह का नाम लेना बहुत पसन्द था। वो जब भी खजूर के बाग़ में मज़दूरी करते थे तो काम के साथ–साथ अल्लाह का ज़िक्र भी किया करते थे। एक दिन सुबह दादा जी पास की नदी से बाग़ की सिंचाई के लिये पानी का रास्ता बना रहे थे। मैं भी इस काम में दादा जी की मदद कर रहा था। दादा जी बेलचे से बड़े–बड़े पत्थरों को हटा रहे थे और मैं छोटे–छोटे पत्थरों को चुन रहा था।

तभी मैंने दादा जी से पूछा कि आप कितनी नमाज़ें पढ़ते हैं?! क्योंकि मैं जब भी आप को देखता हूँ, आप कुछ न कुछ पढ़ते हुये दिखाई देते हैं। कभी नमाज़ पढ़ते हुये तो कभी तस्बीह पढ़ते हुये। यह सुनकर दादा जी ने खजूर के एक पेड़ से टेक लगाया और माथे से पसीना पोछते हुये बोले, "सुनो मैं तुम्हें एक क़िस्सा सुनाता हूँ। एक दिन मैं अपने मौला हज़रत अली (अ0) के साथ कूफ़े की मस्जिद में बैठा था। मस्जिद के कोने में एक आदमी नमाज़ पढ़ रहा था। हम लोग मस्जिद में बहुत देर तक रहे लेकिन उस आदमी की नमाज़ ख़त्म नहीं हुई। मैंने ताज्जुब के साथ उस आदमी की तरफ़ देखा और कहाः कितना अच्छा आदमी है! मैंने आज तक ऐसे आदमी को नहीं देखा जो इतनी इबादत करता हो।"

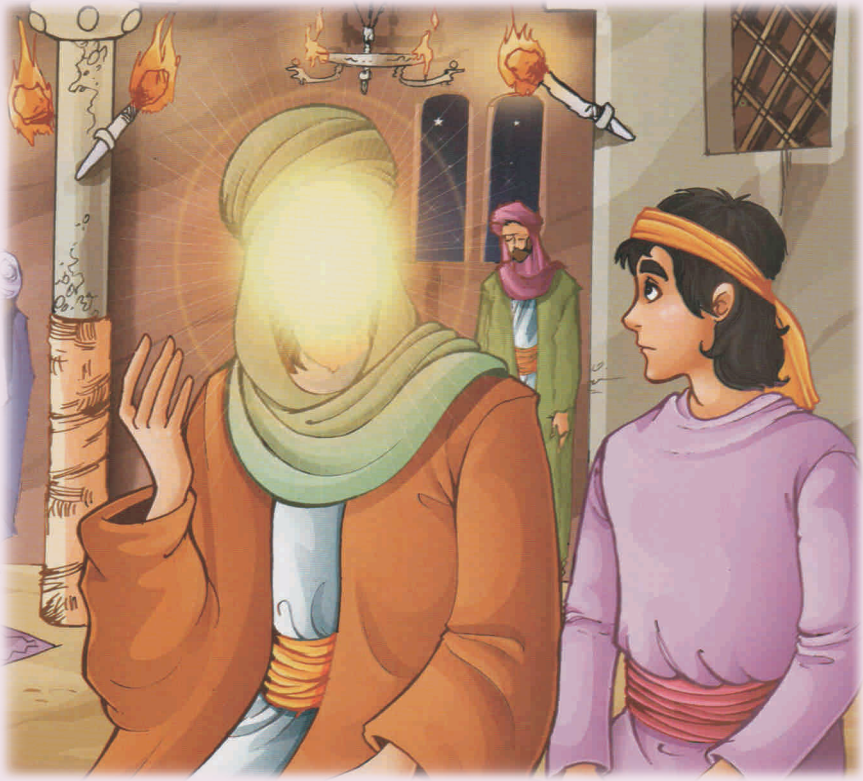

यह सुनकर हज़रत अली (अ0) ने मुझसे कहा, "ऐ क़म्बर! उसकी इस हालत पर इतना ताज्जुब न करो।" मैंने पूछा, "क्यों मौला?" हज़रत अली ने जवाब दिया, "खुदा की क़सम! अगर कोई इन्सान हम अहलेबैत को न माने तो अल्लाह उसके किसी अमल को क़ुबूल नहीं करता, फिर चाहे वो जितनी नमाज़ें पढ़े और चाहे जितने रोज़े रखे। इमाम ने इतना कहा और मस्जिद से चले गये। मैं उस आदमी की तरफ देखता ही रहा जो नमाज़ पढ़ रहा था। मैं दिल ही दिल में सोच रहा था कि यह कैसे मुमकिन है कि इतनी सारी नमाज़ें बेकार हो जायें। लेकिन मुझे यह भी मालूम था कि मेरे मौला की बात कभी ग़लत नहीं हो सकती। उन्होंने जैसा कहा है वैसा ज़रूर होगा। थोड़ी देर बाद मैं भी अपने घर लौट आया और बात ख़त्म हो गई।

कुछ अरसे बाद मौला अली (अ0) के खुले हुये दुश्मनों (ख़वारिज) ने नहरवान की ज़मीन पर इमाम से जंग लड़ी और वो सब मारे गये। जो दुश्मन मारे गये थे उनके बीच एक लाश पर अचानक मेरी नज़र पड़ी। वो उसी आदमी की थी जो मस्जिद में इतनी नमाज़ें पढ़ रहा था और मैंने उसकी हालत पर ताज्जुब किया था। तब मेरी समझ में आया कि इमाम ने मुझे उसकी हालत पर ताज्जुब करने से क्यों मना किया था। इमाम जानते थे कि वो आदमी अहलेबैत (अ0) का दुश्मन है और अहलेबैत (अ0) का दुश्मन, खुदा व रसूल (स0) का दोस्त हो ही नहीं सकता। तो फिर ऐसे इन्सान की इबादतें कैसे क़ुबूल हो सकती हैं।

इस बात के कुछ महीने बाद, सन् 90 हिजरी के आस–पास, एक दिन सुबह सवेरे हुकूमत के कुछ सिपाही हमारे घर पर टूट पड़े और दादा जी को पकड़ कर ले गये फिर उन्हें क़ैदख़ाने में बन्द कर दिया।

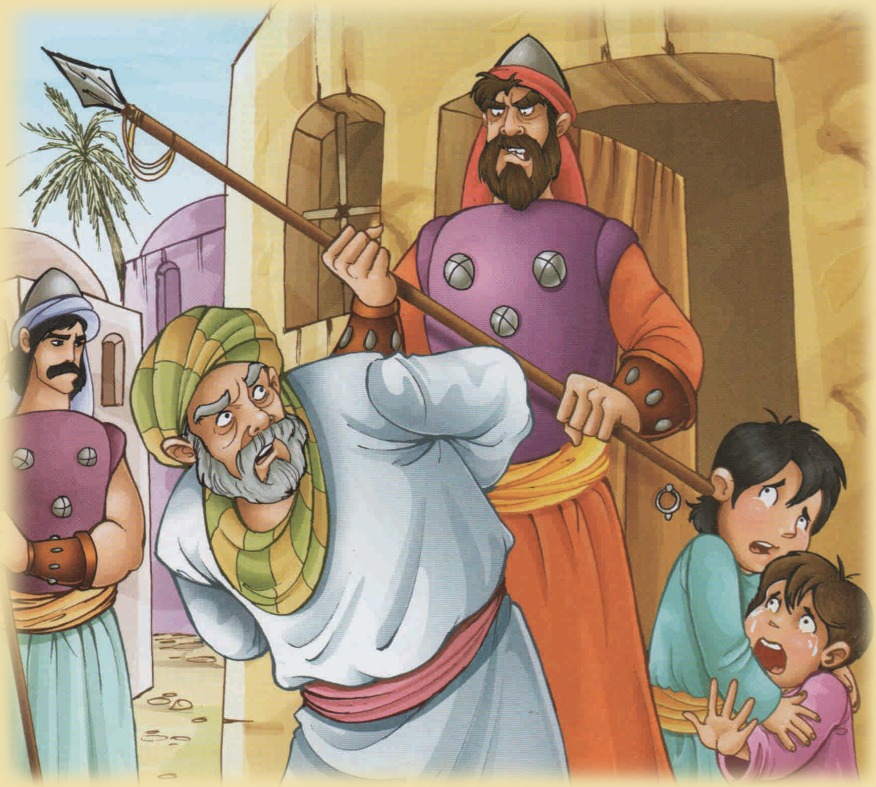

मालूम नहीं दादा जी पर क़ैदख़ाने में क्या गुज़री होगी। सुनते हैं वो लोग क़ैदियों पर बहुत जुल्म करते थे। कुछ दिनों बाद कूफ़े के हाकिम (गवर्नर) हज्जाज ने दादा जी को दरबार में बुलाया। हज्जाज बहुत बुरा आदमी था। वो मौला अली (अ0) और उनके मानने वालों का सख़्त दुश्मन था। जब उसने देखा कि दादा जी हज़रत अली (अ0) से बहुत मुहब्बत करते है तो उसने हुक्म दिया कि दादा जी को क़त्ल कर दिया जाये। फिर क्या था, उन्हें बहुत बेदर्दी से शहीद कर दिया गया। हालाँकि मेरे दादा जी बेगुनाह थे।

दादा जी इस दुनिया से तो चले गये मगर हम सबको यह पैग़ाम दे गये कि हमें हर हाल में अहलेबैत से मुहब्बत और उनकी ख़िदमत करनी चाहिये चाहे इस राह में हमारी जान क्यों न चली जाये।

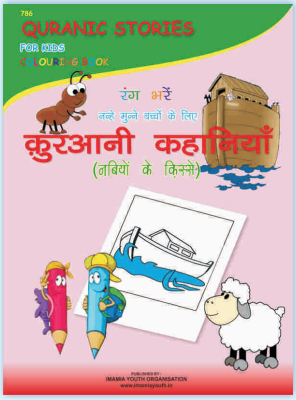

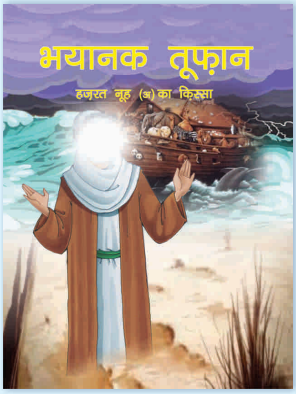

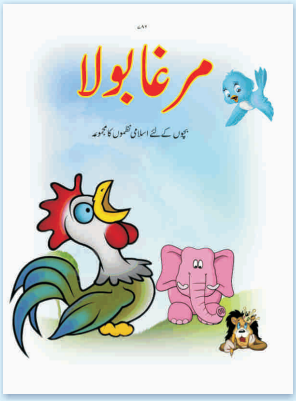

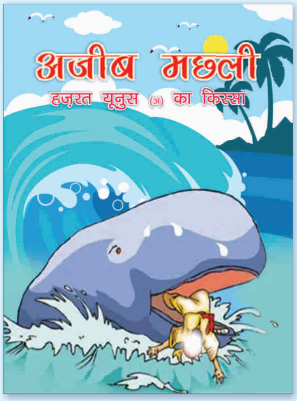

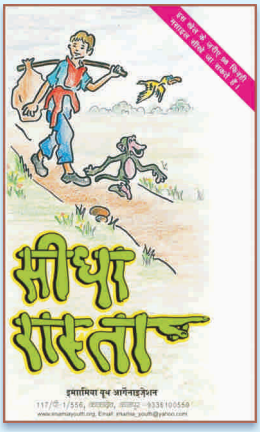

786

इमामिया यूथ आर्गेनाईज़ेशन, बच्चों और नौजवानों के लिए हिन्दी, उर्दू और अंग्रेज़ी में तरह–तरह की दिल्चस्प और रंगीन किताबें छापता रहता है। इसके अलावा आर्गेनाईज़ेशन ने अब तक ऐसे कई इस्लामिक गेम्स भी तैयार किए हैं जिनकी मदद से बच्चा खेल ही खेल में इस्लामी मसाएल और तौर–तरीक़े आसानी से सीख जाता है।

आप इन चीज़ों को अपने बच्चों के लिए या फिर किसी बच्चे को गिफ़्ट करने के लिए हमसे ख़रीद सकते हैं। और अगर आप चाहें तो इन चीज़ों को बतौर ईसाले सवाब बच्चों में बाँट भी सकते हैं। ऐसा करना यक़ीनन सवाबे जारिया होगा।

IMAMIA YOUTH ORGANIZATION
117/556 P-1 BLOCK KAKADEO KANPUR (INDIA) PHONE: 9338100559
Website : www.imamiayouth.in
Email : imamia_youth@yahoo.com